

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 10 अध्याय 85 — देवकी के पुत्रों का पुनरागमन

5 October 2026



वसुदेवजी अपने पुत्रों को समस्त सृष्टि के स्वामी के रूप में पहचानते हैं, श्रीकृष्ण उन्हें सर्वत्र ब्रह्म देखना सिखाते हैं, और दोनों भाई देवकी के छह मारे गए पुत्रों को घर लाने सुतल लोक में उतरते हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विङ्कटम् में पुनः स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की हमारी भक्तिमयी यात्रा। दशम स्कन्ध के इस पचासीवें अध्याय में वसुदेवजी श्रीकृष्ण और बलराम की परमेश्वर रूप में स्तुति करते हैं, श्रीकृष्ण सबमें एक आत्मा का उपदेश देते हैं, और देवकी की अपने छह मारे गए पुत्रों के लिए याचना दोनों भाइयों को राजा बलि के लोक तक ले जाती है।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 10 (दशम स्कन्ध, उत्तरार्ध)
- अध्याय: 85 (पचासीवाँ अध्याय)

- अध्याय शीर्षक: वसुदेव को श्रीकृष्ण का उपदेश; देवकी के छह पुत्रों की वापसी
- मुख्य वक्ता: श्री शुकदेव गोस्वामी (राजा परीक्षित को); अन्तिम श्लोक सूत गोस्वामी कहते हैं
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: द्वारका; राजा बलि का सुतल लोक
- केंद्रीय विषय: वसुदेव की स्तुति; सब ब्रह्म है; देवकी की प्रार्थना; बलि की पूजा; छह पुत्रों की मुक्ति
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 10, अध्याय 85, श्लोक 1-59
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, भाग 2)

पूर्व अध्याय का संदर्भ

चौरासीवें अध्याय में कुरुक्षेत्र में ऋषियों ने वसुदेवजी से महान् यज्ञ कराया; फिर यदुवंशियों ने नन्द और व्रजवासियों का तीन मास सत्कार किया और वर्षा से पहले द्वारका लौट आए।

पुत्र पिता के चरणों में झुकते हैं

शुकदेवजी ने कथा आगे बढ़ाई। एक दिन श्रीकृष्ण और बलराम अपने माता-पिता के घर आए और वसुदेवजी के चरणों में प्रणाम किया। उन्होंने प्रेम से दोनों का स्वागत किया; किन्तु ऋषियों से वे सुन चुके थे कि उनके पुत्र वास्तव में कौन हैं, और ऐसे कर्म देख चुके थे जो कोई मनुष्य-बालक नहीं कर सकता। उन्हें दिव्य जानकर उन्होंने गहरे स्नेह से सम्बोधित किया।

वसुदेव की स्तुति: प्रकृति और पुरुष के स्वामी

उन्होंने श्रीकृष्ण को सत्-चित्-स्वरूप और संकर्षण बलराम को महायोगियों के स्वामी कहकर पुकारा, और कहा कि वे जानते हैं कि दोनों सनातन हैं — जगत् के दो कारणों, प्रकृति और पुरुष, के भी अधीश्वर।

कृष्ण कृष्ण महायोगिन् सङ्कर्षण सनातन ।

जाने वामस्य यत् साक्षात् प्रधानपुरुषौ परौ ॥ ३ ॥

kṛṣṇa kṛṣṇa mahā-yogin saṅkarṣaṇa sanātana jāne vām asya yat sākṣāt pradhāna-puruṣau parau

अर्थ: हे कृष्ण, हे कृष्ण, महायोगिन्! हे संकर्षण, सनातन! मैं जानता हूँ कि आप दोनों साक्षात् इस जगत् के परम प्रधान और पुरुष हैं — मूल प्रकृति और मूल चेतन, जो इसके परे हैं। (स्कन्ध 10, अध्याय 85, श्लोक 3)



ऋषियों से सुनकर और उनके कर्म देखकर वसुदेवजी अपने पुत्रों का प्रणाम स्वीकार करते हैं और फिर उन्हें प्रकृति और पुरुष के सनातन स्वामी कहकर सम्बोधित करते हैं
(श्लोक 1-20)।

वे आगे बोले — जो कुछ भी, जहाँ भी, जब भी, जिस रूप में है, वह आप ही हैं: जगत् का आधार और कारण, उसके एकमात्र स्वामी, जिनकी लीला के लिए यह रचा गया। अपनी ही रचना में अन्तर्यामी रूप से प्रवेश कर आप प्राण और जीव बनकर इसे धारण करते हैं; सृष्टि के सारे कारक आपकी ही शक्ति से क्रियाशील हैं। फिर उन्होंने समूचे जगत् को प्रभु का ही रूप कहा: चन्द्रमा की कान्ति, अग्नि का तेज, सूर्य, नक्षत्रों और विद्युत् की प्रभा; पर्वतों की स्थिरता और पृथ्वी की गन्ध; जल की पवित्रता और रस; इन्द्रियों का ओज और देह का बल; दिशाएँ, आकाश, शब्द और वाणी; इन्द्रियों के अधिष्ठाता देवता, बुद्धि का निश्चय और अनुभवों को जोड़ने वाली स्मृति। भूत, इन्द्रियाँ और मन जिस त्रिविध अहंकार से उपजते हैं, वह आप हैं, और कर्म-बद्ध जीवों को पुनर्जन्म में भेजने वाली माया भी आप हैं। जैसे द्रव्य अपने बदलते विकारों के नीचे वही रहता है, वैसे ही आप सब नश्वर वस्तुओं के पीछे अविनाशी सत्य हैं; गुण आपमें ठहरे हैं पर आपको छूते नहीं, और जो उनके प्रवाह में आपकी सूक्ष्म उपस्थिति नहीं देखते, वे जन्म-मृत्यु में भटकते हैं।

“बस, अब बहुत हुआ”: पिता शरण लेते हैं

वसुदेवजी बोले कि सौभाग्य से इस भूमि में उन्हें मनुष्य-देह मिली, फिर भी प्रभु की माया से मोहित होकर उन्होंने जीवन उसके प्रयोजन की उपेक्षा में बिता दिया। प्रभु “मैं” और “मेरे” की रस्सियों से संसार को बाँधते हैं। “आप हमारे पुत्र नहीं, प्रकृति और प्रत्येक जीव के स्वामी हैं, जो राजाओं का भार उतारने आए हैं — जैसा आपने प्रकट होते समय मुझसे कहा था।”

तत्ते गतोऽस्म्यरणमद्य पदारविन्द-
मापन्नसंसृतिभयापहमार्तबन्धो ।
एतावतालमलमिन्द्रियलालसेन
मर्त्यात्मदृक् त्वयि परे यदपत्यबुद्धिः ॥ १९ ॥

*tat te gato 'smy arāṇam adya padāravindam āpanna-saṁsṛti-bhayāpaham āṛta-bandho
etāvatālam alam indriya-lālasena martyātma-dṛk tvayi pare yad apatya-buddhiḥ*

अर्थ: इसलिए हे आर्तबन्धो, आज मैं आपके उन चरणकमलों की शरण में आया हूँ जो शरणागतों का संसार-भय हर लेते हैं। बस, अब बहुत हुई इन्द्रियों की यह लालसा, जिसके वश में मैंने इस मरणधर्मा देह को अपना माना और आप परमेश्वर को अपनी सन्तान समझा। (स्कन्ध 10, अध्याय 85, श्लोक 19)

उन्होंने सूतिकागृह के प्रभु-वचन स्मरण किए: अजन्मा होते हुए भी वे धर्म-रक्षा के लिए युग-युग में हम दोनों के द्वारा प्रकट हुए हैं। आकाश की भाँति आप अनगिनत रूप धारण करते और छोड़ते हैं, फिर भी एक और अनन्त रहते हैं; आपकी योगमाया को कौन समझ सकता है? सारा संसार आपकी महिमा गाता है।

प्रभु का उत्तर: सब कुछ ब्रह्म देखो

यह सुनकर यदुकुल-शिरोमणि श्रीकृष्ण मुस्कराए, विनय से झुके और मधुर वाणी में बोले: “पिताजी, हम आपके पुत्र हैं, और आपने हमसे परम तत्त्व कहा है; आपका कहा सब हम स्वीकार करते हैं।” फिर आया अध्याय का हृदय-स्वरूप उपदेश।

अहं यूयमसावार्य इमे च द्वारकौकसः ।
सर्वेऽप्येवं यदुश्रेष्ठ विमृग्याः सचराचरम् ॥ २३ ॥

*ahaṁ yūyam asāv ārya ime ca dvārakaukasaḥ sarve 'py evaṁ yadu-śreṣṭha vimṛgyāḥ sa-
carācaram*

अर्थ: हे यदुश्रेष्ठ! मैं स्वयं, आप, ये मेरे पूज्य बड़े भाई, ये द्वारकावासी, और चराचर सहित समस्त प्राणी — सबको इसी प्रकार ब्रह्म-रूप में देखना चाहिए। (स्कन्ध 10, अध्याय 85, श्लोक 23)



पिता को मुस्कराकर प्रणाम करते हुए श्रीकृष्ण सिखाते हैं कि वे, बलराम, वसुदेव, द्वारकावासी और सभी प्राणी ब्रह्म-रूप देखे जाएँ — एक आत्मा जो पाँच तत्त्वों की भाँति अपने कार्यों में अनेक दिखती है (श्लोक 21-26)।

उन्होंने समझाया कि आत्मा एक है, स्वयंप्रकाश, नित्य और गुणों से परे; फिर भी वह अपने से गुणों को प्रकट करती है, और उनसे बने शरीरों में अनेक, दृश्य, क्षणिक और गुणयुक्त-सी दिखती है — जैसे पाँच तत्त्वों में से प्रत्येक, स्वरूप में एक होते हुए भी, अपने कार्यों में व्यक्त या अव्यक्त, थोड़ा या अधिक दिखता है।

पिता की स्तुति के बाद प्रभु यह क्यों जोड़ते हैं? वसुदेवजी ने देख लिया था कि उनके पुत्र ईश्वर हैं, पर उस ईश्वर और स्वयं उनके बीच एक दूरी शेष थी। श्रीकृष्ण उसे मिटा देते हैं: जो ब्रह्म कृष्ण-बलराम में पहचाना गया, वही वसुदेव में, द्वारकावासियों में, प्रत्येक प्राणी में पहचाना जाना चाहिए; सच्चा ज्ञान उन्हें सर्वत्र पाना है, जहाँ दूसरा कुछ है ही नहीं। सर्वशक्तिमान प्रभु को सुनकर वसुदेवजी भेद-बुद्धि से मुक्त हुए और मौन आनन्द में मन स्थिर कर लिया।

देवकी की अपने छह पुत्रों के लिए प्रार्थना

देवकी, जिनमें सभी देवियाँ विराजती थीं, यह सुनकर विस्मित थीं कि उनके पुत्र गुरु के चिरकाल पहले मरे पुत्र को यमलोक से लौटा लाए थे। कंस द्वारा जन्मते ही मारे गए अपने बच्चों को स्मरण कर उन्होंने अश्रुपूरित नेत्रों से श्रीकृष्ण और बलराम से कहा — “हे अप्रमेयात्मा राम, हे योगेश्वरों के स्वामी कृष्ण, आप प्रजापतियों के भी शासक और आदि-पुरुष के प्रकट रूप हैं। पृथ्वी का भार बने राजाओं को हटाने आप मेरे द्वारा अवतरित हुए हैं। आपके अंश से माया, माया से गुण और उनसे जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और लय होती है। आज मैं आपकी शरण लेती हूँ। जैसे आप गुरु-पुत्र को लौटा लाए, वैसे मेरी कामना भी पूरी कीजिए: भोजराज के मारे हुए मेरे पुत्रों को मुझे दिखाइए।”



कंस द्वारा जन्मते ही मारे गए पुत्रों को स्मरण कर देवकी आँसू भरी आँखों से श्रीकृष्ण और बलराम से उन्हें वैसे ही लौटा लाने की प्रार्थना करती हैं जैसे वे गुरु-पुत्र को लौटा लाए थे (श्लोक 27-33)।

सुतल में: राजा बलि प्रभु का स्वागत करते हैं

माता की इस प्रेरणा से श्रीकृष्ण और बलराम अपनी योगमाया से सुतल लोक में प्रविष्ट हुए। दैत्यराज बलि ने जब विश्वात्मा को उस युगल रूप में आते देखा, तो हर्ष से उमड़ते हृदय के साथ आसन से उठ खड़े हुए और सपरिवार प्रणाम किया। उन्होंने दोनों को आसन दिया, चरण धोए और ब्रह्मा तक समस्त विश्व को पवित्र करने वाला वह जल अपने और परिवार के सिर पर छिड़का। वस्त्र, आभूषण, चन्दन, ताम्बूल, दीप और अमृत-से व्यंजनों से पूजा की, अपना परिवार, धन और स्वयं को अर्पित किया, और प्रभु के चरणों को बार-बार हृदय और सिर पर धारण करते हुए — आँखें आँसुओं से धुँधली, रोम खड़े — गद्गद वाणी में प्रार्थना करने लगे।

बलि की प्रार्थना: अन्धे कुँ से उबारिए

“हे अनन्त, महान् राम, आपको नमस्कार; हे कृष्ण, सबके रचयिता, ज्ञान और भक्ति दोनों मार्गों के उद्गम, परब्रह्म, परमात्मा, आपको नमस्कार।” उन्होंने कहा कि आपका दर्शन साधारण प्राणियों को दुर्लभ है, फिर भी कितना सुलभ, क्योंकि रजोगुणी-तमोगुणी हमें आपने बिना माँगे ही दे दिया। दैत्य, दानव, गन्धर्व, सिद्ध, विद्याधर, चारण, यक्ष, राक्षस, पिशाच, भूत और प्रमथ-नायक वेद-विग्रह आपसे वैर रखते हैं, फिर भी वैर से या सकाम भक्ति से हममें से कुछ सात्त्विक देवताओं से भी अधिक आपके निकट पहुँचे। महायोगी भी आपकी योगमाया नहीं समझ पाते, फिर हम कैसे?

तन्नः प्रसीद निरपेक्षविमृग्ययुष्मत्-
पादारविन्दधिषणान्यगृहान्धकूपात् ।
निष्क्रम्य विश्वशरणाङ्घ्र्युपलब्धवृत्तिः
शान्तो यथैक उत सर्वसखैश्चरामि ॥ ४५ ॥

*tan naḥ prasīda nirapekṣa-vimṛgya-yuṣmat- pādāravinda-dhiṣaṇānya-gṛhāndha-kūpāt niṣkramya
viśva-śaraṇāṅghry-upalabdha-vṛttiḥ śānto yathaika uta sarva-sakhaiś carāmi*

अर्थ: अतः हम पर प्रसन्न हों: मेरी बुद्धि आपके उन चरणकमलों में लगे जिन्हें निष्काम जन खोजते हैं, ताकि मैं गृहस्थी के इस अन्धे कुएँ से निकलकर, जगत् के आश्रय आपके चरणों के सहारे जीता हुआ, शान्त होकर अकेला विचरूँ, अथवा उन सन्तों के साथ जो सबके मित्र हैं। (स्कन्ध 10, अध्याय 85, श्लोक 45)



पाताल के सुतल लोक में राजा बलि हर्ष से आसन से उठते हैं, श्रीकृष्ण और बलराम को आसन देकर उनके चरण धोते हैं, वह जल अपने और परिवार के सिर पर छिड़कते हैं और अपना सर्वस्व उन्हें अर्पित करते हैं (श्लोक 34-38)।

अन्त में उन्होंने सर्वभूतेश्वर से माँगा कि हमें निष्पाप करें और वह मार्ग बताएँ जिस पर श्रद्धा से चलकर मनुष्य विधि-निषेध से ऊपर उठ जाता है।

छह भाइयों का इतिहास

तब प्रभु ने बलि को बताया कि ये बालक कौन हैं। प्रथम मन्वन्तर में मरीचि के उनकी पत्नी ऊर्णा से छह पुत्र हुए, सभी देवता। अपनी ही कन्या के प्रति अनुचित कामना से ग्रस्त ब्रह्मा को देखकर वे हँस पड़े, और उस अपराध से हिरण्यकशिपु के पुत्र बनकर असुर-योनि में जन्मे; वहाँ से योगमाया उन्हें देवकी के गर्भ में ले आई, और कंस ने जन्मते ही उन्हें मार डाला। “हमारी माता इन बच्चों के लिए शोक करती हैं, जो अब तुम्हारे पास हैं। उनका शोक मिटाने हम इन्हें ले जाएँगे; शाप से मुक्त होकर ये शान्तिपूर्वक अपने लोक लौट जाएँगे।” उन्होंने नाम बताए — स्मर, उद्गीथ, परिष्वंग, पतंग, क्षुद्रभृत् और घृणी — और वचन दिया कि उनकी कृपा से छहों अपनी सद्गति पुनः पा लेंगे। बालकों को लेकर, बलि से फिर पूजित होकर दोनों भाई द्वारका लौटे और उन्हें माता की गोद में सौंप दिया।

देवकी अपने बच्चों को दूध पिलाती हैं; उनका स्वर्गारोहण

उन बच्चों को देखते ही वात्सल्य से देवकी के स्तनों से दूध बहने लगा। उन्होंने उन्हें गोद में भरा, गले लगाया और बार-बार उनके सिर सूँधे, और सृष्टि-चक्र चलाने वाली प्रभु की माया से मोहित होकर प्रसन्नता से उन्हें दूध पिलाया।

पीत्वामृतं पयस्तस्याः पीतशेषं गदाभृतः ।
नारायणाङ्गसंस्पर्शप्रतिलब्धात्मदर्शनाः ॥ ५५ ॥

pītvāmṛtaṁ payas tasyāḥ pīta-śeṣaṁ gadā-bhṛtaḥ nārāyaṇāṅga-saṁsparśa- pratilabdhātma- darśanāḥ

अर्थ: देवकी का वह अमृत-सा दूध पीकर, जो स्वयं गदाधारी प्रभु के पीने से बचा हुआ था, और नारायण के अंगों के स्पर्श से आत्मदर्शन पुनः प्राप्त कर, वे छहों रूपान्तरित हो गए। (स्कन्ध 10, अध्याय 85, श्लोक 55)



प्रभु द्वारा चखा हुआ दूध पीकर और उनके स्पर्श से आत्मज्ञान पाकर छहों भाई गोविन्द, देवकी, वसुदेव और बलराम को प्रणाम करते हैं और सबके देखते-देखते देवलोक को उठ जाते हैं (श्लोक 55-57)।

उन्होंने गोविन्द को, देवकी को, अपने पिता को और बलराम को प्रणाम किया और सबके देखते-देखते देवलोक चले गए। मृत पुत्रों को आते और जाते देखकर देवकी ने विस्मय में समझा कि यह श्रीकृष्ण की माया की लीला है; शुकदेवजी ने कहा कि अनन्त-शक्ति प्रभु के ऐसे कर्म अनन्त हैं।

सूतजी के समापन-वचन

यहाँ नैमिषारण्य के ऋषियों को भागवत सुनाते सूत गोस्वामी ने श्रोता को आशीर्वाद दिया।

य इदमनुशृणोति श्रावयेद् वा मुरारे-
श्रितममृतकीर्तेर्वर्णितं व्यासपुत्रैः ।
जगदघभिदलं तद्भक्तसत्कर्णपूरं
भगवति कृतचित्तो याति तत्क्षेमधाम ॥ ५९ ॥

ya idam anuśṛṇōti śrāvayed vā murāreś caritam amṛta-kīrter varṇitam vyāsa-putraiḥ jagad-aghahid alaṁ tad-bhakta-sat-karṇa-pūraṁ bhagavati kṛta-citto yāti tat-kṣema-dhāma

अर्थ: जो कोई अमृत-कीर्ति मुरारि के इस चरित्र को, जिसे व्यासपुत्र ने वर्णित किया, नियमपूर्वक सुनता या सुनाता है — वह चरित्र जो जगत् के पाप हर लेता है और भक्तों के कानों का आभूषण है — उसका चित्त भगवान् में लग जाता है और वह उनके परम कल्याणमय धाम को प्राप्त होता है। (स्कन्ध 10, अध्याय 85, श्लोक 59)

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. जो कुछ चमकता है, उन्हीं से चमकता है। वसुदेवजी चन्द्र-ज्योति और अग्नि में, पृथ्वी की गन्ध और जल के रस में, वाणी, स्मृति और इन्द्रियों में प्रभु को पाते हैं; भक्त संसार को एक ही नाम की तरह पढ़ना सीखता है।
2. स्नेह वह रस्सी है जो प्रभु ने स्वयं बाँधी। बालक कृष्ण के प्रति प्रेम भी “मैं” और “मेरे” का एक रूप था; उपाय कम प्रेम करना नहीं, बल्कि यह पहचानना है कि हम सदा किससे प्रेम करते रहे।
3. जानने वाला भी ब्रह्म है। श्रीकृष्ण का निर्देश कि वे, बलराम, वसुदेव और सभी प्राणी ब्रह्म-रूप देखे जाएँ, साक्षात्कार को दूरस्थ ईश्वर की प्रशंसा नहीं, भेद का अन्त बना देता है।
4. सही प्रार्थना उनके चरणों की है। देवताओं को भी दुर्लभ दर्शन पाकर बलि केवल यही माँगते हैं कि सांसारिक जीवन के अन्धे कुएँ से निकलकर प्रभु के चरणों का आश्रय मिले।
5. उनकी कृपा वह पूरा करती है जो शाप ने आरम्भ किया। ब्रह्मा का उपहास करने से गिरे, असुरों में जन्मे और कंस के हाथों मरे छहों पुत्रों को श्रीकृष्ण का स्पर्श आत्मज्ञान और अपना लोक लौटा देता है।

एक भक्तिमय चिन्तन

यह दशम स्कन्ध के सबसे शान्त और आत्मीय अध्यायों में से एक है। एक पिता स्तुति करता है, एक माता रोती है, पाताल का एक राजा दो जोड़ी चरण धोता है, और छह बच्चे दूध पीकर घर लौट जाते हैं। फिर भी इसमें भक्ति का पूरा पथ है। वसुदेवजी वह क्षण दिखाते हैं जब परिचय का पर्दा हटता है और जिसे हम सहज भाव से लेते रहे, वही प्रकृति-पुरुष का स्वामी दिखता है। श्रीकृष्ण दिखाते हैं कि यह दृष्टि लौटकर स्वयं हमें और हर प्राणी को समेटे। देवकी दिखाती हैं कि प्रभु पुराने घाव को टालते नहीं, उसका उत्तर देते हैं। और छहों भाई याद दिलाते हैं कि कोई पतन अन्तिम नहीं: उनका स्पर्श अब भी हमें जगाकर घर भेज सकता है।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज जो एक साधारण वस्तु सामने आए — धूप, जल का स्वाद, किसी की आवाज़ — उसे वसुदेवजी की तरह प्रभु की उपस्थिति मानकर स्वीकार करें। फिर, जैसा श्रीकृष्ण ने कहा, वही पहचान आसपास के लोगों और स्वयं तक फैलाएँ। दिन का समापन बलि की इस प्रार्थना से करें कि मन उनके चरणकमलों में टिक जाए। आरम्भ और अन्त में धीरे-धीरे जपें: ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

उपसंहार

दशम स्कन्ध के पचासीवें अध्याय में ज्ञान और प्रेम एक ही घर में मिलते हैं। वसुदेवजी का बोध पुत्रों के चरणों में समर्पण पर पूरा होता है; श्रीकृष्ण का उत्तर उसे इतना विस्तृत कर देता है कि ब्रह्म के बाहर कुछ नहीं बचता; देवकी के शोक का सम्मान सुतल की यात्रा और वहाँ बलि की पूजा से होता है; और मुक्त हुए छहों भाई सबके सामने ऊपर उठ जाते हैं। सूतजी का आशीर्वाद बताता है कि हम इसे क्यों सुनते हैं: मुरारि के चरित्र मन को उनमें स्थिर कर उनकी शरण तक पहुँचाते हैं। हम सबमें उन्हें देखें और भरोसा रखें कि वे हर खोए बच्चे को घर ले आएँगे।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ एवं श्रेय

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, भाग 2), दशम स्कन्ध (उत्तरार्ध), अध्याय 85, मुद्रित पृष्ठ 478–484।
- शृंखला: Srimad Bhagavatam Wisdom · Biswa Sanatan Dharma Seva Trust।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन और अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी और लिप्यन्तरण में दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में हैं। यह किसी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद या भाष्य की प्रतिलिपि नहीं है। किसी प्रकाशक से सम्बद्धता या अनुमोदन निहित नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-10-chapter-85-krishna-instructs-vasudeva-and-retrieves-devakis-sons-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज़डम · कल्कि अवतार इंटरनेशनल · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट